डी. एस. तेवतिया और आई. एस. तिवाना , जे. जे. के समक्ष

टेक चंद और अन्य,- ***याचिकाकर्ता***

बनाम

भारत का संघ और एक अन्य,- ***उत्तरदाता।***

सिविल लेखन सं. 1453 का 1971

अप्रैल 23, 1980.

सरकारी अनुदान अधिनियम (XV का 1895)-धारा 2 और 3 –गवर्नर जनरल-इन-काउंसिल का आदेश संख्या 179 का 1836 - विनियम 6 और 7 - भारत का संविधान 1950 - अनुच्छेद 14, 19 और 31 - भूमि अनुदान 'पुरानी अनुदान' शर्तों 1836 के आदेश के तहत — विनियम 6 - विनियम 6 के तहत ऐसी भूमि की बहाली - क्या , अनुच्छेद 19 और 31 का उल्लंघन है - ऐसी बहाली - क्या भेदभावपूर्ण है - फिर से शुरू करने से पहले सुनवाई का अवसर - क्या अनुदान प्राप्तकर्ता को दिया जाना आवश्यक हो - ऐसा अवसर मुआवजे की मात्रा निर्धारित करने के लिए - यदि आवश्यक हो।

माना जाता है कि पुनः आरंभ करने की शक्ति एक वैधानिक विनियमन द्वारा एक विशेष शक्ति है। इसलिए यह माना जाएगा कि शक्ति का प्रवर्तन भी उसी वैधानिक विनियमन के तहत किया जाना है। क्योंकि यह दिखाने के लिए कुछ भी नहीं है कि सांविधिक प्राधिकारी को इस तरह के प्रवर्तन के लिए सांविधिक विनियमन से बाहर सिविल न्यायालय या किसी अन्य प्राधिकरण के पास जाने की आवश्यकता थी। वैधानिक विनियमन स्व-निहित है। क्योंकि, पुनः आरंभ करने की शक्ति का सीधा सा अर्थ है कि अनुदान के अस्तित्व में आने से पहले की यथास्थिति। इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता है कि सरकार ने कानून को अपने हाथों में ले लिया या सरकार भूमि और सदन को फिर से शुरू करने में कानून का सहारा लिए बिना काम कर रही थी। विनियमन एक विशेष कानून है। इसने सरकार और अनुदान प्राप्तकर्ता के बीच किसी भी न्यायिक या अर्ध-न्यायिक प्राधिकरण के हस्तक्षेप पर विचार नहीं किया। भूमि में या उस पर किसी भी हित या अधिकार की पूर्ण की अनुपस्थिति में अनुदान प्राप्तकर्ता को यह दावा करने से अयोग्य कर देती है कि सरकार को भूमि और घर पर कब्जा फिर से शुरू करने के लिए

उसके खिलाफ मुकदमा दायर करना चाहिए। फिर से शुरू करने के संबंध में अनुदानकर्ता और अनुदान प्राप्तकर्ता के बीच कोई विवाद तय नहीं किया जाना था।यह वैधानिक विनियमन के तहत सरकार द्वारा फिर से शुरू करने की शक्ति के प्रत्यक्ष प्रयोग की व्याख्या करता है।इसलिए इस पर कोई आपत्ति नहीं की जा सकती है।संविधान के अनुच्छेद 31 (5) (ए) के अनुसार विनियमन संविधान से पहले "मौजूदा कानून" है। सी. एल. इसलिए संविधान के अनुच्छेद 31 का (2) इस पर लागू नहीं होता है।चूँकि विनियम स्पष्ट रूप से भूमि और घर को सीधे फिर से शुरू करने का अधिकार देता है, अनुदान प्राप्तकर्ता को अनुच्छेद 31 के खंड (1) के अर्थ के भीतर "कानून के अधिकार से" अपने घर से वंचित कर दिया गया है।इसी कारण से, का अधिकार।संविधान के अनुच्छेद 19 (1) (च) के तहत घर की संपत्ति रखने के लिए अनुदान प्राप्तकर्ता अनुच्छेद 19 (5) के तहत उचित प्रतिबंध के अधीन है। सामान्य जनता के हित में। (Para 7)

माना गया कि अनुदान अधिनियम 1895 की धारा 3 सरकार को ऐसी शर्तों और सीमाओं को लागू करने के लिए निरंकुश विवेकाधिकार की घोषणा करता है जैसा वह उचित समझे, चाहे देश का सामान्य कानून कुछ भी हो। अनुदान प्राप्तकर्ताओं के साथ सख्ती से अनुदान की उन शर्तों के अनुसार व्यवहार किया जाना चाहिए जिनका पालन करने के लिए वे उस पर सुपर संरचना के निर्माण के उद्देश्य से भूमि का अनुदान स्वीकार करते समय सहमत हुए थे, जिसे अब साइट के साथ फिर से शुरू कर दिया गया है। निःसंदेह, सरकार ने अतीत में कुछ व्यक्तियों के संबंध में अनुदान भूमि पर अधिसंरचनाओं के अधिग्रहण के लिए भूमि अधिग्रहण अधिनियम के प्रावधानों को लागू किया था। यह सरकार द्वारा ऐसे व्यक्तियों को दी गई कुछ रियायत के बराबर है और इस तरह की रियायत का अधिकार के रूप में दावा नहीं किया जा सकता है। और यदि अनुदान प्राप्तकर्ताओं को वह रियायत नहीं दी गई थी कि केंद्र सरकार की कार्रवाई को भेदभावपूर्ण नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि जब कोई अपना दावा करने के लिए आता है तो वह अपने दावे को उस दावे तक सीमित करने के लिए प्रतिबंधित है जिसका वह कानूनन हकदार है। (पैरा 9 और 10)

माना जाता है कि जहां पूरे अनुदान को फिर से शुरू करने की मांग की जाती है और न केवल इसका एक हिस्सा, अनुदान प्राप्तकर्ता को सुने जाने का अवसर देने का सवाल ही नहीं उठता है। (पैरा 11)।

अभिनिर्धारित किया कि पुनः आरंभ करने के आदेश का संचालन भवन के मूल्य के भुगतान की प्रतीक्षा नहीं कर सकता है। फिर से शुरू करने का आदेश नोटिस प्राप्त होने की तारीख से एक महीने की अवधि समाप्त होने की तारीख से लागू हो जाता है। इसके बाद, भले ही अनुदानकर्ता इमारत में रहने की कोशिश करता है, वह ऐसा एक अतिक्रमणकारी के रूप में करता है न कि अनुदानकर्ता या लाइसेंसधारी के रूप में और कानून के अनुसार इस तरह से निपटा जा सकता है। हालाँकि, यह प्रतिवादी पर बाध्यकारी होगा कि वे फिर से शुरू किए गए भवन के मूल्य की मात्रा के निर्धारण के संबंध में अनुदान प्राप्तकर्ता को सुनने का अवसर प्रदान करें। अनुदान प्राप्तकर्ता द्वारा मुआवजे की मात्रा को स्वीकार नहीं करने की स्थिति में जो सक्षम प्राधिकारी द्वारा उसे सुनने के बाद निर्धारित किया जा सकता है, अनुदान प्राप्तकर्ता के लिए एक साधारण दीवानी अदालत में मुआवजे की अपर्याप्तता को चुनौती देने और फिर से शुरू किए गए भवन के लिए न्यायसंगत और कानूनी मुआवजे की वसूली की मांग करने के लिए खुला होगा।

(पैरा 14)।

भगवती देवी बनाम। भारत के राष्ट्रपति और एक अन्य, 1972, सभी। एल. जे. 382 से अलग किया गया।

माननीय न्यायाधीश श्री भूपिंदर सिंह ढिल्लों द्वारा मामले में शामिल कानून के एक महत्वपूर्ण प्रश्न के निर्णय के लिए 10 जनवरी, 1974 को एक बड़ी पीठ को भेजा गया मामला। माननीय न्यायाधीश श्री डी. एस. तेवतिया और माननीय न्यायाधीश श्री आई. एस. तिवाना की खण्ड पीठ ने अंततः 23 अप्रैल, 1980 को मामले का फैसला सुनाया।

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के तहत याचिका यह प्रार्थना करती है कि सरशियोरेराई, परमादेश, निषेध या ऐसी अन्य रिट या निर्देश जारी करके जिसे यह माननीय न्यायालय उचित समझे, संलग्नक 'डी' जारी करने में प्रतिवादी की कार्रवाई जिसे याचिकाकर्ताओं के शांतिपूर्ण कब्जे को खतरे में डाला जा रहा है, कृपया रद्द किया जा सकता है।

यह भी प्रार्थना की जाती है कि 1836 के विनियम, जिनके तहत कार्रवाई करने की मांग की गई है, उन्हें संविधान के विपरीत घोषित किया जाए।

यह आगे प्रार्थना की जाती है कि प्रतिवादीओं को इस संपत्ति को फिर से शुरू नहीं करने का निर्देश दिया जाए।

यह भी प्रार्थना की जाती है कि इस रिट याचिका विचाराधीनता रहने के दौरान प्रतिवादी को निर्देश दिया जाए कि वे अपने किरायेदारों द्वारा से इस संपत्ति के शांतिपूर्ण कब्जे का आनंद लेने के याचिकाकर्ताओं के अधिकारों में हस्तक्षेप न करें और उन्हें विवादित संपत्ति को ध्वस्त करने या अन्यथा उसमें हस्तक्षेप करने से रोका जा सके।

यह प्रार्थना की जाती है कि इस रिट याचिका विचाराधीनता रहने के दौरान पूरी स्थिति का पालन करने का आदेश दिया जाए। इस मामले के अभिलेखों को कृपया तलब किया जा सकता है और याचिकाकर्ताओं को इस रिट याचिका का खर्चा दिया जा सकता है।

याचिकाकर्ता की ओर से अधिवक्ता टी. एस. दोआबिया।

प्रतिवादी की ओर से अधिवक्ता सी. डी. दीवान, रमेश पुरी के साथ अधिवक्ता और एस. पी. जैन.

फैसला

डी .एस. तेवतिया, जे.

(1) याचिकाकर्ताओं ने विवादग्रस्त संपत्ति को फिर से शुरू करने पर सबसे पहले इस आधार पर आपत्ति जताई है कि यह कानून के अधिकार के बिना थी। वैकल्पिक रूप से, 12 सितंबर, 1836 के गवर्नर जनरल-इन-काउंसिल के आदेश संख्या 179 का विनियम 6, जिसे लागू किया गया था, प्रतिवादी संख्या 1 और 2 द्वारा 17 मार्च, 1971 के संलग्नक 'डी' को फिर से शुरू करने का विवादित नोटिस जारी कर रहा है, जिसे भारत के संविधान के अनुच्छेद 31 और 19 (1) (एफ) के तहत दिए गए याचिकाकर्ताओं के मूल अधिकार का उल्लंघन करने के रूप में अमान्य करार दिया जा रहा है और किसी भी मामले में, फिर से शुरू करने की कार्रवाई को भेदभाव से पीड़ित और इस प्रकार संविधान के अनुच्छेद 14 का उल्लंघन माना जाता है।

(2) उपरोक्त आधारों के आधार पर विवादों पर विचार करने से पहले, विवाद में संपत्ति की पहचान के संबंध में एक भ्रम को दूर करना उचित है जिसे फिर से शुरू किया जाना चाहिए।

(3) याचिकाकर्ताओं की ओर से दायर प्रतिकृति सहित पक्षों की दलीलों से, जो तथ्य निर्विवाद रूप से सामने आते हैं, वे यह हैं कि याचिकाकर्ताओं के पिता, लाला दुनी चंद, गवर्नर जनरल-इन में निहित "पुराने अनुदान" शर्तों पर थे। -काउंसिल के आदेश क्रमांक 179

दिनांकित! 12 सितंबर, 1836, अंबाला कैंट में 2.98 एकड़ का क्षेत्र, 30 जुलाई, 1941 को याचिकाकर्ताओं के पिता केंद्र सरकार से पट्टे पर सुरक्षित,-संलग्नक 'ए' के माध्यम से, "पुराने अनुदान" की शर्तों पर रखे गए 2.98 एकड़ क्षेत्र में से 0.38 एकड़ का क्षेत्र। पट्टा, जो शुरू में 30 वर्षों के लिए था, 90 वर्षों तक नवीनीकरण योग्य था।"पुराने अनुदान" की शर्तों पर रखे गए 26 एकड़ के शेष क्षेत्र को सर्वेक्षण संख्या 36 आवंटित किया गया था, जबकि 30 जुलाई, 1941 के बाद पट्टे पर रखे गए 38 एकड़ के क्षेत्र को सर्वेक्षण संख्या 36-ए दिया गया था। प्रतिवादी ने 26 एकड़ के क्षेत्र को कवर करने वाले सर्वेक्षण संख्या 36 और उस पर खड़ी इमारत, जिसे बंगला संख्या 42 के रूप में वर्णित किया गया है, को फिर से शुरू करने की मांग की है, जैसा कि 17 मार्च, 1971 के नोटिस, संलग्नक 'डी' से स्पष्ट होगा, जिसमें पूरी तरह से पुनरुत्पादन किया गया है।इसमें लिखा हैः—

“जबकि भूमि में सर्वेक्षण संख्या 36 (बंगला संख्या 42) अंबाला छावनी शामिल है जिसका क्षेत्रफल 2.6 एकड़ है और यह निम्नानुसार घिरा हुआ हैः—

उत्तर से -ब्रिंड रोड और सर्वेक्षण संख्या 36-ए, दक्षिण से-सर्वेक्षण संख्या 35 (बंगला संख्या 40), पूर्व से-आर. एच. ए. मेस रोड।

पश्चिम से -सर्वेक्षण संख्या 33 (बंगला संख्या 43), भारत के राष्ट्रपति से संबंधित है (जिसे इसके बाद सरकार कहा जाता है) और "पुराने अनुदान" पर आयोजित किया जाता है। 'गवर्नर जनरल के आदेश सं. 179, दिनांक 12 सितंबर, 1836 जिसके तहत सरकार उक्त भूमि को फिर से शुरू करने की हकदार है।

और जहां उक्त संपत्ति सरकार द्वारा किराए पर ली गई है, वह सरकार के कब्जे में है।

और जहाँ सरकार ने उपरोक्त गवर्नर जनरल के आदेश की शर्तों के तहत उक्त संपत्ति को फिर से शुरू करने का निर्णय लिया हैः

इसलिए अब, यहाँ पूर्व में उल्लिखित शक्ति का प्रयोग करते हुए, सरकार आपको सूचित करती है कि उक्त भूमि और उस पर खड़ी इमारतों में आपके सभी अधिकार, छूट और ब्याज इस सूचना के 30 दिनों की समाप्ति पर समाप्त हो जाएंगे।

आगे ध्यान दें कि भुगतान करने के लिए सरकार तैयार है और इसलिए आपको रुपये की राशि की पेशकश की जाएगी। 3,640 (तीन हजार छह सौ चालीस रुपये केवल) के मूल्य के रूप में उक्त भूमि पर अधिकृत निर्माण खड़े हैं। यदि प्रस्तावित मुआवजे की राशि स्वीकार्य नहीं है यदि आप चाहें, तो आप संरचनाओं को हटाने के लिए स्वतंत्र हैं, ताकि भूमि को उसी स्थिति में छोड़ सकें, जिस स्थिति में वह निर्माण से पहले थी।

इसका मतलब है कि सर्वेक्षण संख्या 36-ए और के अंतर्गत आने वाला क्षेत्र जो पट्टा-विलेख, प्रदर्शनी 'ए', दिनांक 30 तारीख का विषय-वस्तु बनाता है जुलाई, 1941 को फिर से शुरू करने की मांग नहीं की जा रही है। आगे, जैसा होगा लिखित कथन के माध्यम से शपथ पत्र के पैराग्राफ 2 से स्पष्ट हो 1971 की सिविल रिट याचिका संख्या 1453 में, सर्वेक्षण द्वारा कवर की गई भूमि क्रमांक 36 जिस पर बंगला क्रमांक 42 का परिसर था, स्वीकार किया गया केंद्र सरकार के स्वामित्व में (इसके बाद)। प्रतिवादी-सरकार के रूप में संदर्भित)

(4) सर्वेक्षण संख्या 36 और 36-ए द्वारा कवर किया गया पूरा स्थल और उस पर निर्मित भवन केंद्र सरकार के पास 500 रुपये प्रति माह के किराए पर था।

(5) स्वीकृत तथ्यों के उपरोक्त सर्वेक्षण के आलोक में, याचिका में इस धारणा के आधार पर किसी भी तर्क पर ध्यान देना अनावश्यक होगा कि जिस संपत्ति को फिर से शुरू करने की मांग की गई थी, वह याचिकाकर्ताओं के साथ पट्टे पर थी, - पट्टा-विलेख, अनुलग्नक 'के तहत ए', दिनांक 30 जुलाई 1941, और याचिकाकर्ताओं के पत्र, अनुलग्नक 'बी', दिनांक 10 जनवरी, 1971 में निहित प्रस्ताव के प्रतिवादी द्वारा स्वीकृति के परिणामस्वरूप उक्त पट्टा 30 वर्षों की अगली अवधि के लिए नवीनीकृत हो गया।.

(6) श्री राज सिंह बनाम भारत संघ और अन्य मामले में दिल्ली उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ के समक्ष विचार के लिए लगभग वही प्रश्न सामने आया जो ऊपर प्रस्तुत किया गया था। देशपांडे, जे., जिन्होंने संवैधानिक और विधायी इतिहास के विस्तृत सर्वेक्षण के बाद बेंच के लिए राय तैयार की, जिसके साथ इस फैसले पर बोझ डालना अनावश्यक है, ने माना कि गवर्नर जनरल-इन-काउंसिल के आदेश संख्या 179, दिनांक 12 सितंबर , 1836, कानून का एक वैध टुकड़ा है और इसके तहत की गई कोई भी कार्रवाई कानून का अधिकार प्राप्त है।

(7) इस प्रश्न की जांच करते हुए कि विनियम 6 याचिकाकर्ताओं के मूल अधिकार का उल्लंघन करता है, संविधान के अनुच्छेद 31 और 19 (1) (च) में निहित है, न्यायमूर्ति देशपांडे ने निम्नलिखित टिप्पणी कीः—

" पुनः आरंभ करने की शक्ति वैधानिक विनियमन द्वारा दी गई एक विशेष शक्ति है। इसलिए, यह माना जाएगा कि शक्ति का प्रवर्तन भी उसी वैधानिक विनियमन के तहत किया जाना है। क्योंकि यह दिखाने के लिए कुछ भी नहीं है कि वैधानिक प्राधिकारी को ऐसे प्रवर्तन के लिए वैधानिक विनियमन के बाहर सिविल न्यायालय या किसी अन्य प्राधिकारी के पास जाने की आवश्यकता थी। वैधानिक विनियमन स्व-निहित है। पुनः आरंभ करने की शक्ति के लिए

इसका सीधा सा मतलब है कि अनुदान अस्तित्व में आने से पहले यथास्थिति बनी रहे। इसलिए, यह नहीं कहा जा सकता कि सरकार ने कानून अपने हाथ में ले लिया है या सरकार जमीन और घर को फिर से हासिल करने के लिए कानून का सहारा लिए बिना काम कर रही है। विनियमन एक विशेष कानून है. सरकार और अनुदान प्राप्तकर्ता के अधिकार के बीच किसी न्यायिक या अर्ध-न्यायिक द्वारा हस्तक्षेप पर विचार नहीं किया गया । भूमि में या उस पर किसी भी हित या अधिकार की पूर्ण अनुपस्थिति ने अनुदान प्राप्तकर्ता को यह दावा करने से अक्षम कर दिया कि सरकार को भूमि और घर पर कब्जा फिर से शुरू करने के लिए उसके खिलाफ मुकदमा दायर करना चाहिए। बहाली के संबंध में अनुदानकर्ता और अनुदान प्राप्तकर्ता के बीच निर्णय लेने के लिए कोई विवाद नहीं था। यह वैधानिक विनियमन के तहत सरकार द्वारा बहाली की शक्ति के प्रत्यक्ष प्रयोग की व्याख्या करता है। अत: इस पर कोई आपत्ति नहीं की जा सकती। संविधान के अनुच्छेद 31(5)(ए) के अनुसार विनियमन संविधान से पहले का "मौजूदा कानून" है। इसलिए, संविधान के अनुच्छेद 31 का खंड (2) लागू नहीं होता है चूंकि विनियमन स्पष्ट रूप से भूमि और घर को सीधे फिर से शुरू करने का अधिकार देता है, याचिकाकर्ता अपीलकर्ता को अनुच्छेद 31 के खंड (1) के अर्थ के भीतर "कानून के अधिकार द्वारा" उसके घर से वंचित कर दिया गया है। इसी कारण से, याचिकाकर्ता अपीलकर्ता को धारण करने का अधिकार है संविधान के अनुच्छेद 19(1)(एफ) के तहत गृह संपत्ति आम जनता के हित में अनुच्छेद 19(5) के तहत उचित प्रतिबंध के अधीन है।... ... .”

सम्मानपूर्वक, हम उपरोक्त सूत्र से पूरी तरह सहमत हैं देशपांडे, जे. के विचार (जैसा कि उस समय उनका प्रभुत्त्व था)

(1) ए. एक्स. आर. 1973, दिल्ली 169

(8) हमारे सामने जिस प्राथमिक बिंदु पर बहस हुई है, वह यह है कि सर्वेक्षण संख्या 36 द्वारा कवर की गई साइट और उस पर बनी इमारत को फिर से शुरू करने के लिए विनियम 6 को लागू करने में प्रतिवादी संख्या 1 (बाद में प्रतिवादी-सरकार के रूप में संदर्भित) की कार्रवाई भेदभावपूर्ण है। इसमें उन व्यक्तियों की संपत्ति, जिनके पास अतीत में इसी तरह की "पुरानी अनुदान" शर्तों के तहत संपत्ति थी, को भूमि अधिग्रहण अधिनियम के प्रावधानों को लागू करके हासिल किया गया था, जिसमें भवन के बाजार मूल्य पर भुगतान की परिकल्पना की गई थी, जिसे फिर से शुरू करने की मांग की गई थी। सोलैटियम, मुआवजे के मूल्यांकन का कौन सा तरीका प्रतिवादी-सरकार के स्वामित्व वाली भूमि पर खड़े अधिरचना के मालिक के लिए अधिक

उदार और फायदेमंद है, जब इस तरह की अधिरचना की मांग की जाती है तो मुआवजे का मूल्यांकन और पेशकश प्रतिवादी-सरकार द्वारा विनियम 6 के तहत पुनः आरंभ-आदेश द्वारा की जाती है। एक और मुद्दा जो याचिकाकर्ताओं की ओर से कुछ जोरदार तरीके से प्रचारित किया गया है, वह यह है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों की गारंटी है कि इमारत के लिए मुआवजे की मात्रा निर्धारित करने से पहले और फिर से शुरू करने का नोटिस जारी करने से पहले, अनुबंध 'डी', याचिकाकर्ताओं को सुनवाई का अवसर दिया जाना चाहिए था। ।

विद्वान वकील ने असमान व्यवहार और इस प्रकार भेदभाव किए जाने के संबंध में अपना तर्क विकसित करते हुए इस बात पर जोर दिया कि जहां दो वैकल्पिक उपचार उपलब्ध थे, वह यह था जो अपने संचालन में कम कठोर था, जिसका सहारा लेना पड़ा और इसलिए, भूमि अधिग्रहण के प्रावधान अधिनियम, जो उदारवाद की कसौटी पर खरा उतरता है, न कि विनियमन 6 के प्रावधान जो फिर से शुरू की गई इमारत के लिए मुआवजे के आकलन के लिए कोई मानदंड प्रदान नहीं करते हैं और इस प्रकार मुआवजे के भुगतान के संबंध में इमारत के मालिक के खिलाफ कठोर कार्रवाई की जा सकती है, जो होनी चाहिए आह्वान किया गया. प्रतिवादी ने अपने लिखित बयान में स्वीकार किया कि कुछ मामलों में, अतीत में, भूमि और उस पर खड़ी अधिरचना का अधिग्रहण करने के लिए भूमि अधिग्रहण अधिनियम के प्रावधानों को लागू किया गया था। लेकिन वह प्रथा छोड़ दी गई थी। याचिका के पैराग्राफ 23 में उल्लिखित "*रोशन लाई शर्मा और आर एल वर्मा*" के मामलों में, यह कहा गया था कि यह एक गलती थी कि भूमि अधिग्रहण अधिनियम के प्रावधानों को लागू किया गया था।

(9) हमारी राय में, उपरोक्त विवाद का उत्तर सरकारी अनुदान अधिनियम, 1895 (इसके बाद अनुदान अधिनियम के रूप में संदर्भित) की खंड 3 द्वारा प्रदान किया गया है, जो निम्नलिखित शब्दों में हैः—

> “उपरोक्त किसी भी तरह के अनुदान या हस्तांतरण में निहित सभी प्रावधान, प्रतिबंध, शर्तें और सीमाएं वैध होंगी और इसके विपरीत विधानमंडल के किसी भी कानून, क़ानून या अधिनियम के अनुसार प्रभावी होंगी।” लॉर्डशिप ने "यूपी राज्य बनाम जहूर अहमद और अन्य" (2), में अनुदान अधिनियम की खंड 3 की व्याख्या करते हुए कहा कि खंड 3 सरकार को ऐसी शर्तों और सीमाओं को लागू करने के लिए अशिक्षित विवेक की घोषणा करती है जो वह उचित समझती है, चाहे देश का सामान्य कानून कुछ भी हो। अनुदान अधिनियम की धारा 2 और 3 का अर्थ यह था कि उस अधिनियम का दायरा केवल संपत्ति हस्तांतरण अधिनियम के प्रावधानों को प्रभावित करने तक सीमित नहीं था। सरकार के पास किसी भी वैधानिक या सामान्य कानून के किसी भी प्रावधान के बावजूद, अपने अनुदानों में किसी भी शर्त, सीमाओं या प्रतिबंधों को लागू करने के लिए

विवेकाधिकार, और अधिकार, विशेषाधिकार और दायित्वों को अनुदान की शर्तों के अनुसार विनियमित करेगा।

(10) उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, इस तर्क को स्वीकार नहीं किया जा सकता है कि केंद्र सरकार विनियमन 6, के प्रावधानों को लागू करने के अपने अधिकार के भीतर नहीं थी। याचिकाकर्ताओं के साथ अनुदान की शर्तों के अनुसार सख्ती से निपटा जाना चाहिए, जिनका वे उस पर अधिरचना के निर्माण के उद्देश्य से भूमि के अनुदान को स्वीकार करते समय पालन करना के लिए सहमत हुए थे, जो अब साइट के साथ फिर से शुरू हो गया है।इसमें कोई संदेह नहीं है कि सरकार ने अतीत में और याचिका के पैराग्राफ 23 में उल्लिखित व्यक्तियों के संबंध में भी अनुदान भूमि पर अधिसंरचनाओं के अधिग्रहण के लिए भूमि अधिग्रहण अधिनियम के प्रावधानों को लागू किया था।यह सरकार द्वारा ऐसे व्यक्तियों को दिखाई गई कुछ रियायत के बराबर है और इस तरह की रियायत का अधिकार के रूप में दावा नहीं किया जा सकता है और यदि याचिकाकर्ताओं को वह रियायत नहीं दी गई थी, तो केंद्र सरकार की उस कार्रवाई को भेदभावपूर्ण नहीं कहा जा सकता है, क्योंकि जब कोई अपना दावा करने के लिए आता है, तो कोई व्यक्ति अपने दावे को उस दावे तक सीमित करने के लिए प्रतिबंधित होता है जिसका वह कानून में हकदार है।

(11) अब हम याचिकाकर्ताओं के इस तर्क की जांच करते हैं कि नोटिस जारी करने से पहले और मुआवजे की मात्रा निर्धारित करने से पहले, उन्हें सुनवाई का अवसर दिया जाना चाहिए था। उन्होंने इस तर्क के लिए इस न्यायालय के एक खण्ड पीठ के फैसले से समर्थन मांगा, जिसे भारत संघ और एक अन्य बनाम श्रीमती हरदर्शन साहित्य (3) के रूप में रिपोर्ट किया गया था, और इसकी निम्नलिखित टिप्पणियों की ओर हमारा ध्यान आकर्षित किया:—

> "श्री कुलदिप सिंह का इस आशय का तर्क कि अनुदान में एक विशिष्ट प्रावधान की अनुपस्थिति में में निम्नलिखित की आवश्यकता है अनुदान प्राप्तकर्ता को उसके अनुदान के किसी भी हिस्से को फिर से शुरू करने से पहले सुनवाई का अवसर दिया जा रहा है, प्राकृतिक न्यायाधीश के संतोषजनक सिद्धांतों का कोई सवाल ही नहीं उठ सकता है।प्राकृतिक न्यायाधीश के सिद्धांत हमेशा उस स्थिति में कदम रखेंगे जहां किसी व्यक्ति के नागरिक अधिकार शामिल हैं या जहां कुछ अर्ध-न्यायाधीशिक और न्यायाधीशिक कार्य का प्रयोग किया जाना है, जब तक कि उनमें से किसी भी सिद्धांत के अनुप्रयोग को प्रासंगिक कानून या अनुदान द्वारा स्पष्ट रूप से बाहर नहीं किया जाता है।इस मामले में प्राकृतिक न्यायाधीश के सिद्धांतों का ऐसा कोई बहिष्कार नहीं है। इसलिए, इन सिद्धांतों को अनुदान के एक हिस्से को फिर से शुरू करने के

सवाल पर और मुआवजे की मात्रा के निर्धारण के सवाल पर भी लागू होना चाहिए, जिसके लिए प्रतिवादी हकदार है।"

श्रीमती हरदर्शन साह के मामले (ऊपर) के अनुपात को प्रतिवादी की ओर से भी हमारे सामने ऊपर बताए गए निवेदन का विरोध करने के लिए दबाव डाला गया है।प्रतिवादी की ओर से मुख्य न्यायाधीश नरूला की निम्नलिखित टिप्पणियों पर जोर दिया जाता है, जिन्होंने उपरोक्त मामले में पीठ की ओर से इस प्रकार बात कीः—

> "मैं, विद्वान न्यायाधीश द्वारा की गयी टिप्पणियों से भी पूरी तरह सहमत हूं कि चीजें पूरी तरह से अलग होतीं अगर अनुदान के विषय को बनाने वाले पूरे भूखंड को फिर से शुरू किया जाता।उस स्थिति में, अनुदानकर्ता द्वारा अनुदान को फिर से शुरू करने के आत्यन्तिक अधिकार को देखते हुए अनुदानकर्ता द्वारा फिर से शुरू करने के खिलाफ कोई कारण नहीं दिखाया जाएगा।हालाँकि, ऐसे मामले में चीजें काफी अलग हैं जहाँ सरकार अनुदान के विषय के रूप में भूमि के एक हिस्से को फिर से शुरू करना चाहती है।यह प्रदर्शित करने के लिए किसी तर्क की आवश्यकता नहीं है कि जिस भूखंड पर एक स्थान पर या किसी अन्य स्थान पर बंगला बनाया गया है, उसमें से भूमि के बिल्कुल समान क्षेत्र को फिर से शुरू करने से अनुदान प्राप्तकर्ता के लिए सभी अंतर आ सकते हैं, जिससंस्पर्शी शेष भूमि बची रहने वाली है, हालांकि इससे सरकार के लिए सड़क पर या अन्यथा भूमि के किसी विशेष क्षेत्र के लिए उसकी आवश्यकता के संबंध में कोई फर्क नहीं पड़ सकता है। ऐसी स्थिति में यह स्पष्ट है कि अनुदान के एक हिस्से के फिर से शुरू होने के बाद शेष भूमि पर कब्जा करने के लिए अनुदान प्राप्तकर्ता के नागरिक अधिकार क्षेत्र के चयन को गंभीर रूप से ख़तरे में डाल दिया गया है जो एक घटना में व्यावहारिक रूप से शेष अनुदान को भी नष्ट कर सकता है, और दूसरी घटना में या तो इसे बिल्कुल भी प्रभावित नहीं कर सकता है या इसे नगण्य रूप से प्रभावित कर सकता है। ऐसी स्थिति में मुझे यह स्वयंसिद्ध प्रतीत होता है कि प्राकृतिक न्याय के सिद्धांत तुरंत लागू होंगे और केंद्र सरकार को प्रतिवादी की आपत्तियों और/या वैकल्पिक सुझावों को सुनने की आवश्यकता होगी और फिर अंततः यह तय करना होगा कि उन्हें संपत्ति का कौन सा हिस्सा दिया जाएगा। लेना चाहेंगे. बेशक, प्रतिवादी को सुनने के बाद सरकार का निर्णय किसी भी तर्क, अपील या जांच के अधीन नहीं है

श्रीमती हरदर्शन साही के मामले (उपरोक्त) में तथ्य यह थे कि अनुदान भूमि के केवल एक हिस्से को फिर से शुरू करने की मांग की गई थी और इसी कारण से इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि फिर से शुरू करने की सूचना जारी करने से पहले अनुदान प्राप्तकर्ता को सुनवाई का अवसर दिया जाना चाहिए था।वर्तमान मामले में स्थिति पूरी तरह से अलग है कि पूरे अनुदान को फिर से शुरू करने की मांग की गई है और इसलिए, श्रीमती

हरदर्शन साही के मामले (ऊपर) में परिकल्पित किसी भी अवसर को प्रदान करने का सवाल ही पैदा नहीं होता है।

(2) (1973) 2 एस. सी. सी. 547
(3) ए. आई. आर. 1975, पंजाब हरियाणा 228।

(12) जहां तक मुआवजे की मात्रा के निर्धारण के संबंध में एक अवसर प्रदान करने का संबंध है, यह देखा जा सकता है कि अनुदान भूमि और उस पर इसकी अधिसंरचनाओं को फिर से शुरू करने की कार्रवाई अधिसंरचनाओं के मूल्य के पूर्व भुगतान पर सशर्त नहीं है।यह एक दायित्व है जो फिर से शुरू करने की कार्रवाई के बाद आता है।एक बार लाइसेंस फिर से शुरू होने के बाद, अनुदानकर्ता की स्थिति एक लाइसेंसधारी की हो जाती है, उसका पद एक अतिचारक का हो जाता है और वह फिर से शुरू की गई संपत्ति पर कब्जा नहीं कर सकता है, जिसके लिए वह हकदार होगा यदि यह माना जाता है कि अनुदान भूमि पर अधिसंरचनाओं के मूल्य का भुगतान, अनुदान फिर से शुरू होने की स्थिति में, उसे फिर से शुरू करने की पूर्व शर्त होगी और अनुदानकर्ता को सुनवाई का अवसर देने के बाद मूल्य का निर्धारण किया जाएगा।

(13) हम प्रतिवादी के वकील के साथ पूरी तरह से जाने के लिए भी तैयार नहीं हैं, जब वह भगवती देवी बनाम भारत के राष्ट्रपति मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के एक फैसले के अनुपात के आधार पर भारत सरकार के अवर सचिव, रक्षा मंत्रालय, नई दिल्ली द्वारा से और एक अन्य, (4), यदि मुआवजे का प्रस्ताव अनुदान प्राप्तकर्ता को स्वीकार्य नहीं था, तो उसने प्रचार किया। नोटिस में निर्धारित अवधि के भीतर सामग्री को हटा सकते हैं और प्रतिवादी को साइट का खाली कब्जा दे सकते हैं।

(4) 1972 ए.एल.जे. 382.

(14) अनुदान अधिनियम के विनियम 6 में अनुदान को फिर से शुरू करने के लिए सरकार पर दो शर्तें लगाई गई हैं, अर्थात (1) वह एक महीने का नोटिस देगी और (2) वह अनुदान-भूमि पर बनाए गए अनुमत भवन के मूल्य का भुगतान करेगी। इस विनियम की व्याख्या इस तरह से की जानी चाहिए कि यह न तो अनुदानकर्ता द्वारा आवश्यक माने जाने पर अनुदान को फिर से शुरू करने के उक्त प्रावधानों के पीछे के उद्देश्य को विफल करता है और न ही यह कानून के अनुसार, प्राप्त करने के अनुदान प्राप्तकर्ता के अधिकार को खतरे में डालता है। उस भवन का मूल्य जिसे उसे अनुदान भूमि पर बनाने की अनुमति दी गई थी। जब इस तरह से समझा जाता है, तो हमारे विचार में चरम विवाद, अधिरचनाओं के मूल्य के भुगतान के संबंध में प्रतिवादी की ओर से अग्रिम रूप से "इसे छोड़ दें" या "इसे लें", एकत्र नहीं कर सकते हैं।

अत्यंत सम्मान के साथ, हम स्वयं को भगवती देवी के मामले (ऊपर) में प्रतिपादित दृष्टिकोण का समर्थन करने में असमर्थ पाते हैं। हमारा विचार है, जैसा कि पहले ही देखा जा चुका है, कि फिर से शुरू करने के आदेश का संचालन भवन के मूल्य के भुगतान की प्रतीक्षा नहीं कर सकता है। फिर से शुरू करने का आदेश नोटिस प्राप्त होने की तारीख से एक महीने की अवधि समाप्त होने की तारीख से लागू हो जाता है।इसके बाद, भले ही अनुदान प्राप्तकर्ता इमारत में रहने की कोशिश करता है, वह ऐसा एक अतिक्रमणकारी के रूप में करता है न कि अनुदान प्राप्तकर्ता या लाइसेंस प्राप्तकर्ता के रूप में और कानून के अनुसार इस तरह से निपटा जा सकता है। हालाँकि, यह प्रतिवादी पर बाध्यकारी होगा कि वे फिर से शुरू किए गए भवन के मूल्य की मात्रा के निर्धारण के संबंध में अनुदान प्राप्तकर्ता को सुनने का अवसर प्रदान करें। अनुदान प्राप्तकर्ता द्वारा सक्षम प्राधिकारी द्वारा उसे सुनने के बाद निर्धारित किए जाने वाले मुआवजे की मात्रा को स्वीकार नहीं करने की स्थिति में, अनुदान प्राप्तकर्ता के लिए मुआवजे की अपर्याप्तता को एक साधारण दीवानी न्यायालय में चुनौती देने और फिर से शुरू किए गए भवन के लिए न्यायसंगत और कानूनी मुआवजे की वसूली की मांग करने का अधिकार होगा।

(15) वर्तमान मामले में, प्रतिवादी के विद्वान अधिवक्ता श्री सी. डी. दीवान ने हमें इमारत के मूल्य का हिसाब करने का तरीका दिखाने वाला दस्तावेज़ प्रदान किया। भवन के मूल्य का हिसाब करने में जिस सिद्धांत का पालन किया जाता है, वह इस आधार पर है कि भवन फिर से शुरू होने की तारीख को अपना जीवन समाप्त कर चुका था। तब सामग्री की राशि, इमारत को ध्वस्त करने के लिए खर्च की जाने वाली राशि और स्थल से ध्वस्त सामग्री को हटाने की लागत को ध्यान में रखा गया था। इसका मूल्य संरचना के विध्वंस की लागत को घटाने और सामग्री के मूल्य से स्थल से सामग्री को हटाने के बाद भवन का मूल्य प्राप्त किया गया था।

(16) सबसे पहले, यह विवादास्पद मुद्दा होगा कि क्या इमारत अपना जीवन पूरा कर चुकी थी। यह इमारत प्रतिवादी के पास 500 रुपये के प्रति माह के किराए पर थी। फिर से शुरू करने के दलते पर रुपये प्रति माह। या तो पहले या फिर से शुरू होने की तारीख पर, यह नहीं कहा गया था कि इमारत अपनी जीर्ण-शीर्ण स्थिति या किसी अन्य कारण से मानव निवास के लिए बेकार हो गई है। याचिकाकर्ताओं के भवन के मूल्य की हिसाब करने में प्रतिवादी द्वारा अपनाया गया तरीका "राज्य सचिव बनाम श्री नारायण खन्ना" (5) में उनके लॉर्डशिप ऑफ द प्रिवी काउंसिल द्वारा शासित तरीके के बिल्कुल विपरीत है, जबकि निर्धारित भवन के मूल्य की हिसाब करने का सिद्धांत इन शब्दों में थाः

> “मूल्यवान स्थल के विषय के अलावा एक इमारत होने के नाते, वर्तमान समय में इमारत को फिर से बनाने की लागत का पता लगाकर मूल्य निर्धारित करने का

सिद्धांत, और फिर इमारत की उम्र को ध्यान में रखते हुए विमूल्यन की अनुमति देना और ऐसी मरम्मत की लागत के लिए जो विमूल्यन के अलावा आवश्यक हो सकती है, मुआवजे के उद्देश्य से इमारतों का मूल्यांकन करने की एक सर्वविदित और मान्यता प्राप्त विधि है। कि, विधि यहाँ अपनाई गई थी, और वह विधि, जैसा कि उनके प्रभुओं ने इसकी कल्पना की है, बहाली सूचना से प्रभावित नहीं है, क्योंकि इस मामले में, इमारत को पुनः पेश करने की लागत का पता लगाने के उद्देश्य से जो कीमतें ली जानी थीं, और ली गई थीं, वे बहाली सूचना से बिल्कुल भी प्रभावित नहीं होंगी।"

परिणाम में, हम मानते हैं -

(I) कि विचाराधीन विनियम 6 के तहत याचिकाकर्ताओं को दिए गए एक महीने के नोटिस (प्राप्ति की तारीख से) की समाप्ति की तारीख से भवन और नीचे की जगह को फिर से शुरू करना चालू हो गया, क्योंकि भवन का फिर से शुरू होना भवन के मूल्य के पूर्व भुगतान पर निर्भर नहीं है;

(II) कि यह प्रतिवादी का दायित्व था कि वे उस समय याचिकाकर्ताओं को इमारत के मूल्य का निर्धारण फिर से शुरू करने के समय सुनवाई का अवसर प्रदान करें.

(III) कि चूंकि याचिकाकर्ताओं को फिर से शुरू किए गए भवन के लिए मुआवजे की मात्रा के संबंध में सुनवाई का अवसर नहीं दिया गया था, इसलिए हम प्रतिवादी को निर्देश देते हैं कि वे फिर से शुरू किए गए भवन के लिए मुआवजे की मात्रा के मूल्यांकन के संबंध में याचिकाकर्ताओं को सुनवाई का अवसर दें और उसके बाद उक्त भवन के लिए मुआवजे के योग्य हों।"

याचिका का तदनुसार निपटान किया जाता है और लागत के बारे में कोई आदेश नहीं दिया जाता है।

(5) ए.आई.आर. 1942 पी.सी. 35

अस्वीकरण :- स्थानीय भाषा में अनुवादी निर्णय वादी के सिमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भासा में समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है।सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उदेश्यों के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यावयन के उद्देश्य के लिए उपुक्त रहेगा।.

पूनम कुमारी